शमशेर बहादुर सिंह 6

जन्म : *13 जनवरी, सन् 1911 को देहरादून (उत्तर प्रदेश अब उत्तराखंड में)*

प्रकाशित रचनाएँ : *कुछ कविताएँ, कुछ और कविताएँ, चुका भी हूँ नहीं मैं, इतने पास अपने, बात बोलेगी, काल तुझसे होड़ है मेरी, 'उर्दू-हिंदी कोश' का संपादन*

सम्मान : *'साहित्य अकादेमी' तथा 'कबीर सम्मान' सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित*

निधन : *सन् 1993, अहमदाबाद में*

तुमने 'धरती' का पद्य पढ़ा है? उसकी सहजता प्राण है।

खुद को उर्दू और हिंदी का दोआब मानने वाले शमशेर की कविता एक संधिस्थल पर खड़ी है। यह संधि एक ओर साहित्य, चित्रकला और संगीत की है तो दूसरी ओर मूर्तता और अमूर्तता की तथा ऐंद्रिय और ऐंद्रियेतर की है।

विचारों के स्तर पर प्रगतिशील और शिल्प के स्तर पर प्रयोगधर्मी कवि शमशेर की पहचान एक बिंबधर्मी कवि के रूप में है। उनकी यह बिंबधर्मिता शब्दों से रंग, रेखा, स्वर और कूची की अद्‌भुत कशीदाकारी का माद्दा रखती है। उनका चित्रकार मन कलाओं के बीच की दूरी को न केवल पाटता है, बल्कि भाषातीत हो जाना चाहता है। उनकी मूल चिंता माध्यम का उपयोग करते हुए भी बंधन से परे जाने की है।

ओ माध्यम! क्षमा करना
कि मैं तुम्हारे पार जाना चाहता हूँ।

कथा और शिल्प दोनों ही स्तरों पर उनकी कविता का मिज़ाज अलग है। उर्दू शायरी के प्रभाव से संज्ञा और विशेषण से अधिक बल सर्वनामों, क्रियाओं, अव्ययों और मुहावरों को दिया है। उन्होंने खुद भी कुछ अच्छे शेर कहे हैं।

शमशेर बहादुर सिंह

सचेत इंद्रियों का यह कवि जब प्रेम, पीड़ा, संघर्ष और सृजन को गूँथकर कविता का महल बनाता है तो वह ठोस तो होता ही है अनुगूँजों से भी भरा होता है। वह पाठक को न केवल पढ़े जाने के लिए आमंत्रित करती है, बल्कि सुनने और देखने को भी।

प्रयोगवादी (1943 से प्रारंभ) कविता शिल्प संबंधी बहुत से प्रयोग लेकर आई। नए बिंब, नए प्रतीक, नए उपमान कविता के उपकरण बने। यहाँ तक कि पुराने उपमानों में भी नए अर्थ की चमक भरने का प्रयास प्रयोक्ता कवियों ने किया। अपना आस-पड़ोस कविता का हिस्सा बना। प्रकृति में होने वाला परिवर्तन मानवीय जीवन-चित्र बनकर अभिव्यक्त हुआ। प्रस्तुत कविता **उषा** *सूर्योदय के ठीक पहले के पल-पल परिवर्तित प्रकृति का शब्द-चित्र है। शमशेर ऐसे बिंबधर्मी कवि हैं, जिन्होंने प्रकृति की गति को शब्दों में बाँधने का अद्‌भुत प्रयास किया है। यह कविता भी इसका उदाहरण प्रस्तुत करती है। कवि भोर के आसमान का मूकद्रष्टा नहीं है। वह भोर की आसमानी गति को धरती के जीवन भरे हलचल से जोड़ने वाला स्रष्टा भी है। इसीलिए वह सूर्योदय के साथ एक जीवंत परिवेश की कल्पना करता है जो गाँव की सुबह से जुड़ता है– वहाँ सिल है, राख से लीपा हुआ चौका है और है स्लेट की कालिमा पर चाक से रंग मलते अदृश्य बच्चों के नन्हे हाथ। यह एक ऐसे दिन की शुरुआत है, जहाँ रंग है, गति है और भविष्य की उजास है और है हर कालिमा को चीरकर आने का एहसास कराती उषा।*

www.dreamtopper.in

उषा

प्रात नभ था बहुत नीला शंख जैसे

भोर का नभ

राख से लीपा हुआ चौका
(अभी गीला पड़ा है)

बहुत काली सिल ज़रा से लाल केसर से
कि जैसे धुल गई हो

स्लेट पर या लाल खड़िया चाक
मल दी हो किसी ने

नील जल में या किसी की
गौर झिलमिल देह
जैसे हिल रही हो।

और...

जादू टूटता है इस उषा का अब
सूर्योदय हो रहा है।

www.dreamtopper.in

अभ्यास

कविता के साथ

1. कविता के किन उपमानों को देखकर यह कहा जा सकता है कि उषा कविता गाँव की सुबह का गतिशील शब्दचित्र है?
2. ***भोर का नभ***
   राख से लीपा हुआ चौका
   (अभी गीला पड़ा है)

   नयी कविता में कोष्ठक, विराम चिह्नों और पंक्तियों के बीच का स्थान भी कविता को अर्थ देता है। उपर्युक्त पंक्तियों में कोष्ठक से कविता में क्या विशेष अर्थ पैदा हुआ है? समझाइए।

अपनी रचना

* अपने परिवेश के उपमानों का प्रयोग करते हुए सूर्योदय और सूर्यास्त का शब्दचित्र खींचिए।

आपसदारी

* सूर्योदय का वर्णन लगभग सभी बड़े कवियों ने किया है। प्रसाद की कविता 'बीती विभावरी जाग री' और अज्ञेय की 'बावरा अहेरी' की पंक्तियाँ आगे बॉक्स में दी जा रही हैं। 'उषा' कविता के समानांतर इन कविताओं को पढ़ते हुए नीचे दिए गए बिंदुओं पर तीनों कविताओं का विश्लेषण कीजिए और यह भी बताइए कि कौन-सी कविता आपको ज़्यादा अच्छी लगी और क्यों?

● उपमान ● शब्दचयन ● परिवेश

बीती विभावरी जाग री!
अंबर पनघट में डुबो रही–
तारा-घट ऊषा नागरी।
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई–
मधु मुकुल नवल रस गागरी।
अधरों में राग अमंद पिए,
अलकों में मलयज बंद किए–
तू अब तक सोई है आली
आँखों में भरे विहाग री।

– ***जयशंकर प्रसाद***

www.dreamtopper.in

भोर का बावरा अहेरी
पहले बिछाता है आलोक की
लाल-लाल कनियाँ
पर जब खींचता है जाल को
बाँध लेता है सभी को साथ:
छोटी-छोटी चिड़ियाँ, मँझोले परेवे, बड़े-बड़े पंखी
डैनों वाले डील वाले डौल के बेडौल
उड़ने जहाज़,
कलस-तिसूल वाले मंदिर-शिखर से ले
तारघर की नाटी मोटी चिपटी गोल धुस्सों वाली उपयोग-सुंदरी
बेपनाह काया को:
गोधूली की धूल को, मोटरों के धुएँ को भी
पार्क के किनारे पुष्पिताग्र कर्णिकार की आलोक-खची तन्वि रूप-रेखा को
और दूर कचरा जलानेवाली कल की उद्दंड चिमनियों को, जो
धुआँ यों उगलती हैं मानो उसी मात्र से अहेरी को हरा देंगी।

– सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

www.dreamtopper.in